<u>प्रतिवैद्य</u>

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार

सिविल याचिका संख्या 5930/2022

(एसएलपी (सी) संख्या 11195/2021 से उत्पन्न)

राजस्थान राज्य और अन्य .....अपीलकर्ता

बनाम

फूलसिंह .....प्रत्यर्थी

<u>निर्णय</u>

<u>सुधांशु धूलिया, न्यायाधीश</u>

1. अनुमति दी गई।

2. राजस्थान राज्य ने राजस्थान उच्च न्यायालय, बेंच जयपुर की खण्ड पीठ द्वारा दिनांक 09.09.2020 को पारित आदेश के खिलाफ इस न्यायालय में यह अपील की है। खण्ड पीठ ने आक्षेपित आदेश द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को यथावत रखा है जिसमें वर्तमान प्रत्यर्थी की रिट याचिका को स्वीकार करते हुए उसकी सेवा से बर्खास्तगी के आदेश को रद्द कर दिया था।

2. प्रत्यर्थी फूल सिंह वर्ष 1987 में राजस्थान पुलिस सेवा में एक कांस्टेबल के रूप में भर्ती हुआ था। उसी वर्ष, जब वह धौलपुर (राजस्थान) जिले के मानिया पुलिस स्टेशन में तैनात था, उसने कथित रूप से घोर अनुशासनहीनता के अलावा एक दंडनीय अपराध भी किया। दिनांक 15.10.1987 की शाम को वह लोकमान नामक व्यक्ति के साथ शहर में घूम रहा था। प्रतिवादी उस समय ड्यूटी पर नहीं था, लेकिन उसने पुलिस की वर्दी पहन रखी थी, जब उसने कथित रूप से महेश कुमार नामक व्यक्ति को पकड़ा और उससे 100/– रुपये की मांग की। महेश कुमार के मना करने पर, फूल सिंह ने उसे अपनी मोटरसाइकिल के कागजात दिखाने के लिए कहा और जब वह ये कागजात नहीं दिखा पाया, तो फूल सिंह ने उस मोटरसाइकिल को लेकर भागने की कोशिश की। इस बीच, महेश कुमार द्वारा शोर मचाने के कारण महेश कुमार के समर्थन में भीड़ भी इकट्ठा हो गई। उस समय, फूल सिंह पर कथित रूप से भीड़ की ओर एक बंदूक (पचपेरा) लहराने का आरोप है, लेकिन फिर भी भीड़ द्वारा उसका तब तक पीछा किया गया, जब तक वह अपने घर के अंदर जाने में सफल नहीं हो गया, जो पास में ही था। अपने घर के अंदर घुसते ही उसने अपनी बंदूक से गोलियां चलाई जिससे घर में रहने वाले लोग, यानी उसके परिवार के सदस्य घायल हो गए और संपत्ति को नुकसान पहुंचा। इसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी के खिलाफ मानिया पुलिस थाने में भारतीय दंड संहिता की धारा 392, 307 और पुलिस अधिनियम की धारा 34 सपठित शस्त्र अधिनियम की धारा 3/25 के तहत प्राथमिकी संख्या 146/1987 दर्ज की गई। मामले में जांच के बाद फूल सिंह और लोकमान के खिलाफ आरोप पत्र दाखिल किया गया था। अंततः विचारण न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 392 और शस्त्र अधिनियम की धारा 3/25 के तहत आरोप विरचित किए गए। इसके बाद विचारण न्यायालय ने फूल सिंह को भारतीय दंड संहिता की धारा 392 और शस्त्र अधिनियम की खंड 3/25 के तहत दोषी ठहराते हुए उसे

31 मार्च, 1994 के आदेश के तहत डिफॉल्ट शर्तों के साथ उपरोक्त दोनों अपराधों में से प्रत्येक के लिए एक साल के कठोर कारावास और जुर्माने की सजा सुनाई। सह–आरोपी लोकमान को बरी कर दिया गया। इस आदेश को फूल सिंह द्वारा अपील में चुनौती दी गई थी और विद्वान सत्र न्यायाधीश, धौलपुर, ने अपील को स्वीकृति प्रदान की और अभियुक्त को "संदेह का लाभ"देते हुए विचारण न्यायालय के आदेश को रद्द कर दिया।

3.इस बीच, अपचारी कांस्टेबल के खिलाफ तीन आरोपों पर एक विभागीय कार्यवाही भी शुरू की गई थी, जो इस प्रकार हैः –

"**आरोप संख्या–1:**दिनांक 15.10.87 को आप श्री फूल सिंह कांस्टेबल नं. 386 पुलिस स्टेशन मानिया में तैनात थे। लगभग 3 बजे अपराह्न आपने ऑफ ड्यूटी होते हुए भी पुलिस की वर्दी पहनी हुई थी, आपने शराब पी रखी थी और अत्यधिक नशे में आप कस्बा मानिया में घूमते रहे और शिवराम कच्छी से उसकी लाइसेंसशुदा पचफेरा (राइफल) छीन ली।

आरोप संख्या 2:– दिनांक 15.10.87 को आप नशे की हालत में लोकमान गुर्जर के साथ बेड़िया कस्बा मोहल्ले में गए थे और ऑफ ड्यूटी होते हुए भी बिना किसी प्राधिकार के महेश कुमार पुत्र शिव हरे ब्राह्मण, निवासी पटपारा, धौलपुर से उसकी राजदूत मोटरसाइकिल से संबंधित दस्तावेजों की मांग की और अभद्र तरीके से गाली–गलौच की और 100 रुपये की रिश्वत मांगी और महेश कुमार से मोटरसाइकिल नंबर आरजेडी 7722 जबरन छीन ली और जिसके कारण बहुत से लोग इकट्ठा हो गए और आपका पीछा किया।

आरोप संख्या–3: जनता द्वारा पीछा किए जाने पर आप पुलिस स्टेशन मानिया के परिसर में बने अपने क्वार्टर में भाग गए और नशे की हालत में आत्मरक्षा में अपने घर

के अंदर से उस पचफेरा से गोली चलाई, जिसे आपने शिव राम से छीन लिया था, लेकिन गोली क्वार्टर के चौक में बालकनी में लगी और परिणामस्वरूप बालकनी के टूटे–फूटे टुकड़े आपके परिवार के सदस्यों पर गिर गए और आपके परिवार के सदस्य घायल हो गए और उक्त घटना के बाद आपके खिलाफ पुलिस अधिनियम की धारा 392, 307/34 और शस्त्र अधिनियम की धारा 3/25 के तहत प्राथमिकी संख्या 146 दिनांक 15.10.87 दर्ज की गई।

विभागीय जांच में अभियोजन पक्ष के 14 गवाहों से पूछताछ की गई।इनमें से कुछ गवाहों ने अभियोजन पक्ष का समर्थन किया, कुछ ने नहीं किया। इसके अतिरिक्त, प्रदर्शों की भी जांच की गई थी जैसे कि प्रथम सूचना रिपोर्ट, मोटरसाइकिल की जब्ती का ज्ञापन और सबसे महत्वपूर्ण प्रत्यर्थी का सांस अल्कोहल विश्लेषण परीक्षण, जिसका परिणाम सकारात्मक था अर्थात प्रत्यर्थी ने शराब पी रखी थी। अपचारी कांस्टेबल ने भी बचाव पक्ष के नौ गवाहों से पूछताछ की थी।

अंततः अनुशासनात्मक कार्यवाही में प्रत्यर्थी के खिलाफ सभी तीनों आरोप साबित हो गए और उसे आदेश दिनांक 18.12.1989 के तहत सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। अनुशासनिक प्राधिकारी का यह आदेश प्रत्यर्थी द्वारा अपील में ले जाया गया था, जिसे भी अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दिनांक 23.08.1990 को खारिज कर दिया गया था। फिर एक समीक्षा याचिका भी दायर की गई, जिसे दिनांक 03.06.1994 को खारिज कर दिया गया। जिस समय समीक्षा प्राधिकरण ने प्रत्यर्थी की समीक्षा याचिका को खारिज कर दिया था (अर्थात, 03.06.1994 को), उस समय प्रत्यर्थी, जो दांडिक विचारण का सामना कर रहा था, को भारतीय दंड संहिता की धारा 392 के तहत और शस्त्र अधिनियम की खंड 3/25 के तहत दिनांक 31.03.1994 को, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, विचारण न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया। बाद में,

जैसा कि हम जानते हैं, उसकी दोषसिद्धि के आदेश को सेशन न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया था।

4. प्रत्यर्थी फूल सिंह ने अपनी दोषमुक्ति के बाद अपनी सेवा में बहाली के लिए अधिकारियों के समक्ष एक आवेदन दिया। चूंकि अधिकारियों ने अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं दी, इसलिए उसने वर्ष 1998 में राजस्थान उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष एक रिट याचिका दायर की। उसकी सेवा से बर्खास्तगी को चुनौती हालांकि आपराधिक मामले में उसकी दोषमुक्ति के बाद ही दी गई थी, फिर भी चुनौती विभिन्न आधारों पर भी थी, जैसे कि नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा बर्खास्तगी का आदेश पारित नहीं किया जाना, जांच रिपोर्ट की आपूर्ति नहीं करना, गवाह से जिरह करने की अनुमति नहीं देना आदि। इन सभी आधारों को विद्वत एकल न्यायाधीश का समर्थन नहीं मिला, सिवाय प्रत्यर्थी द्वारा उठाए गए इस आधार के कि अब चूंकि उसने एक ही प्रकार के आरोपों पर दांडिक विचारण का सामना किया है, जहां उसे अंततः सत्र न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था, इसलिए उसकी बर्खास्तगी के आदेश रद्द किए जाने योग्य है और उसे सेवा में बहाल किया जाना चाहिए। विद्वान एकल न्यायाधीश ने उसकी रिट याचिका को स्वीकार कर लिया और उसकी बर्खास्तगी के आदेश को रद्द कर दिया गया और 50% पिछले वेतन के साथ उसकी बहाली के आदेश दिए गए। राजस्थान राज्य ने उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ के समक्ष इस आदेश के खिलाफ एक अपील दायर की, जिसे दिनांक 09.09.2020 को खारिज कर दिया गया।राजस्थान राज्य अब राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा पारित बहाली के आदेश के खिलाफ इस न्यायालय के समक्ष है।

5.हमें यह दोहराना चाहिए कि राजस्थान उच्च न्यायालय ने, रिट याचिका और विशेष अपील दोनों में, प्रत्यर्थी फूल सिंह के मामले को केवल इस आधार पर मंजूर किया था कि अब चूंकि उसे एक दांडिक न्यायालय द्वारा उन्हीं तथ्यों और आरोपों पर दोषमुक्त

कर दिया गया है, जिस पर उसने विभागीय कार्यवाही का सामना किया था इसलिए विभागीय कार्यवाही में पारित आदेश रद्द किए जाने योग्य हैं और उसे सेवा में बहाल किया जाना चाहिए। जैसा कि हमने पहले ही उल्लेख किया है, प्रत्यर्थी की ओर से उठाए गए तर्कों जैसे विभागीय कार्यवाहियों में प्रक्रियात्मक विसंगतियों, निष्पक्ष व्यवहार न किया जाना और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन या प्राधिकरण के अधिकार क्षेत्र की कमी को चुनौती देने वाले तर्कों में से किसी को भी विद्वत एकल न्यायाधीश या खण्ड पीठ का समर्थन नहीं मिला था।

6.राज्य, जो इस न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ता है, की दलील यह है कि प्रत्यर्थी एक अनुशासित बल का सदस्य था। विभागीय कार्यवाही में प्रत्यर्थी के खिलाफ बेहद गंभीर आरोप थे। उस पर जनता को धमकाने और जबरन पैसे वसूलने, शराब के नशे में सार्वजनिक स्थान पर घूमने और फिर एक फायर आर्म का उपयोग करने और लोगों को घायल करने का आरोप लगाया गया था, जो सभी बहुत गंभीर आरोप थे। प्रत्यर्थी को विभागीय कार्यवाही में अपना पक्ष रखने का पूरा अवसर दिया गया था। उसे अभियोजन पक्ष के गवाहों से जिरह करने का अवसर दिया गया और उसने बचाव पक्ष के नौ गवाहों को भी पेश किया, जिनसे विभागीय कार्यवाही के दौरान पूछताछ की गई। अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने निष्कर्ष निकाला कि अपचारी कांस्टेबल (प्रत्यर्थी) ने घोर अनुशासनहीनता और लापरवाही के साथ–साथ कर्तव्यों की उपेक्षा और दुर्व्यवहार और कदाचार का कार्य किया था, और इस प्रकार उसने राजस्थान पुलिस की छवि को सार्वजनिक रूप से धूमिल किया था। इन परिस्थितियों में, अपचारी अधिकारी को पुलिस सेवा में नहीं रखा जा सकता और इसलिए उसे तत्काल प्रभाव से सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। राज्य यह भी तर्क देगा कि जहां तक विभागीय कार्यवाहियों का संबंध है, दांडिक न्यायालय द्वारा उसे दोषमुक्त किए जाने का कोई महत्व नहीं है।

7. इसलिए इस न्यायालय के समक्ष प्रश्न केवल यह है कि क्या प्रत्यर्थी को इस कारण से सेवा में बहाल किया जा सकता है कि अब उन्हीं आरोपों पर उसे एक दांडिक न्यायालय द्वारा बरी कर दिया गया है?

8.इस विषय पर कानून में कोई अस्पष्टता नहीं होनी चाहिए कि विभागीय कार्यवाही आपराधिक कार्यवाही से भिन्न होती है। इन दोनों के बीच मौलिक अंतर यह है कि जहां विभागीय कार्यवाही में एक अपचारी कर्मचारी को 'संभावनाओं की प्रचूरता'के आधार पर अपचारी ठहराया जा सकता है, वहीं दांडिक न्यायालय में अभियोजन पक्ष को अपने मामले को 'संदेह से परे'साबित करना होता है। संक्षेप में, दोनों कार्यवाहियों के बीच अंतर साक्ष्य की प्रकृति और उसके परीक्षण के स्तर में निहित है। इसलिए दोनों न्यायालय अलग–अलग स्तरों पर काम करते हैं। इस कारण से, इस न्यायालय ने बार–बार यह अभिनिर्धारित किया है कि केवल इसलिए कि किसी व्यक्ति को दांडिक विचारण में बरी कर दिया गया है, उसे स्वयमेव सेवा में बहाल नहीं किया जा सकता है।

9.जैसा कि यह हो सकता है कि सेवा से बर्खास्तगी के बाद एक अपचारी कर्मचारी जब समान आरोपों और तथ्यों पर एक दांडिक न्यायालय द्वारा बरी कर दिया जाता है, तो वह बहाली चाहता है। **कैप्टन एम. पॉल एंथनी बनाम भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड और अन्य** के प्रकरण में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया है, वर्तमान प्रत्यर्थी द्वारा भी विद्वत एकल न्यायाधीश और राजस्थान उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ के समक्ष इस पर भरोसा किया गया है। दोनों न्यायालयों ने प्रत्यर्थी के पक्ष में अपना निर्णय देते समय इस निर्णय पर भरोसा किया है। कैप्टन एम पॉल एंथनी के प्रकरण में, इस न्यायालय ने वास्तव में अभिनिर्धारित किया था कि चूंकि याचिकाकर्ता को एक दांडिक न्यायालय द्वारा समान आरोपों पर बरी कर दिया गया था, इसलिए उसे सेवा में बहाल किया जाना चाहिए, चाहे उसे विभागीय कार्यवाही का सामना करने

के बाद सेवा से बर्खास्त कर दिया गया हो। लेकिन कैप्टन एम. पॉल एंथनी के मामले का इसके विशिष्ट तथ्यों की पृष्ठभूमि में मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

10.कैप्टन एम. पॉल एंथनी वर्ष 1985 में 'भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड'में एक 'सुरक्षा अधिकारी'के रूप में काम कर रहे थे, जो कर्नाटक में कोलार गोल्ड माइन्स में सोने के खनन में संलग्न था। पुलिस अधीक्षक द्वारा दिनांक 02.06.1985 को कैप्टन एम. पॉल एंथनी (जिसे हमें यहां 'याचिकाकर्ता'के रूप में भी संदर्भित करना चाहिए) के आवास पर छापेमारी की गई, जहां से 4.5 ग्राम वजन वाली एक स्पंज की सोने की गेंद और 1276 ग्राम 'सोने वाली रेत'बरामद की गई। उन्हें तत्काल सेवा से निलंबित कर दिया गया और उसी दिन एफ. आई. आर. दर्ज की गई।अगले दिन याचिकाकर्ता को एक आरोप पत्र मिला और इसलिए उसके खिलाफ विभागीय कार्रवाई भी शुरू कर दी गई। इसके बाद याचिकाकर्ता ने अपने अनुशासनात्मक अधिकारियों के समक्ष एक आवेदन दिया, जिसमें अनुरोध किया गया कि आपराधिक कार्यवाही के निष्कर्ष आने तक विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाई जाए, लेकिन उनका अनुरोध अस्वीकार कर दिया गया। इस बीच वे अपने गृह राज्य केरल लौट आए और अनुशासनात्मक कार्यवाही को स्थगित करने का अनुरोध किया। इस मांग को भी खारिज कर दिया गया। याचिकाकर्ता के खिलाफ विभागीय कार्रवाई एकतरफा हो गई, जहां उसे कदाचार का दोषी पाया गया। 07.06.1986 को याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। उनके निलंबन की पूरी अवधि के दौरान, उन्हें कोई गुजारा भत्ता नहीं दिया गया।

दिनांक 3 फरवरी, 1987 को कैप्टन एम. पॉल एंथनी को दांडिक विचारण में इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया गया कि अभियोजन अपना पक्ष, विशेष रूप से वह पुलिस छापा जिस पर पूरा मामला आधारित था, साबित करने में विफल रहा था। याचिकाकर्ता ने, अपने दोषमुक्ति के तुरंत बाद, दांडिक न्यायालय के फैसले की एक प्रति अपने विभागीय अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत की और अपनी बहाली के लिए

निवेदन किया। यह निवेदन अस्वीकार कर दिया गया और परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता ने एक विभागीय अपील दायर की, जिसे भी खारिज कर दिया गया। इसके बाद उसने कर्नाटक उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, जहां उसकी रिट याचिका को न्यायालय द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई और उसकी बहाली का आदेश इस आधार पर दिया गया कि याचिकाकर्ता को एक दांडिक न्यायालय द्वारा उन्हीं आरोपों पर बरी कर दिया गया है और इसलिए उसे फिर से सेवा में बहाल किया जाना चाहिए। राज्य ने खण्ड पीठ के समक्ष एक विशेष अपील दायर की, जिसे स्वीकृति प्रदान की गई और विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को रद्द कर दिया गया। याचिकाकर्ता (कैप्टन एम. पॉल एंथनी) ने तब इस न्यायालय के समक्ष कर्नाटक उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ के आदेश को चुनौती दी।

उस प्रकरण का निर्णय करते समय उच्चतम न्यायालय के समक्ष दो पहलू थे। पहला स्वीकृत पहलू यह था कि याची को उसके निलंबन की अवधि के दौरान कोई गुजारा भत्ता नहीं दिया गया था और इसलिए, जब वह केरल में रह रहा तब वह कर्नाटक में विभागीय कार्यवाही का सामना करने की स्थिति में नहीं था। दूसरा पहलू यह था कि याचिकाकर्ता पर दो कार्यवाहियों में एक ही तरह के आरोप थे और इसलिए, उसने विभागीय अधिकारियों से आपराधिक मामले के निष्कर्ष आने तक विभागीय कार्यवाही पर रोक लगाने का अनुरोध किया था, जिसे अस्वीकार कर दिया गया था। यह पहलू सबसे महत्वपूर्ण कारक है, क्योंकि इस न्यायालय की राय थी कि आरोपों में, (दांडिक न्यायालय और विभाग दोनों में), पुलिस द्वारा किए गए 'छापे'से संबंधित तथ्य और कानून का एक जटिल सवाल शामिल था, और इसलिए विभागीय कार्यवाही को रोक दिया जाना चाहिए था और इसे दांडिक कार्यवाही के परिणाम का इंतजार करना चाहिए था। पुलिस द्वारा की गई छापेमारी में उसके घर से कथित तौर पर 'गोल्ड स्पंज बॉल'और 'गोल्ड बियरिंग सैंड'बरामद किए गए थे।छापेमारी और बरमदगी का यह

तथ्य, जो इस मामले का आधार था, गलत साबित हुआ। इन परिस्थितियों में, यह अभिनिर्धारित किया गया कि याचिकाकर्ता को बहाल किया जा सकता है। इस प्रकार कैप्टन एम. पॉल एंथनी प्रकरण का अपने अनूठे तथ्यों के कारण मूल्यांकन किया जाना चाहिए और हमारे विचार में यह प्रकरण सार्वभौमिक अनुप्रयोग के कानून को निर्धारित नहीं करता है।

11. हम ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि कैप्टन एम. पॉल एंथनी प्रकरण के विरुद्ध हमारे पास बड़ी संख्या में ऐसे प्रकरण हैं जिनमें इस न्यायालय ने लगातार यह अभिनिर्धारित किया है कि दोनों कार्यवाहियां अर्थात् दांडिक और विभागीय पूरी तरह से भिन्न हैं और किसी ऐसे व्यक्ति को सेवा में पुनः बहाल नहीं किया जाएगा जिसे दांडिक विचारण में दोषमुक्त करार दिया गया है लेकिन विभागीय कार्यवाही में उसे दोषी पाया गया है। हम इनमें से कुछ निर्णयों का उल्लेख कर सकते हैं।

भारत संघ बनाम सीताराम मिश्रा [2007 एस. सी. सी. ऑनलाइन कलः 718: (2008) 1 कल एल जे 863) के प्रकरण में केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल (सीआरपीएफ) के एक कांस्टेबल पर उपेक्षाकारी होने और लापरवाही बरतने का आरोप लगाया गया और इसलिए उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। इस मामले के तथ्य यह थे कि कांस्टेबल ने अपनी 9 एम.एम. कार्बाइन बंदूक की मेगज़ीन को हटाते समय दुर्घटनावश आठ राउंड गोलियां चलाईं, जिसके परिणामस्वरूप एक कांस्टेबल की मौत हो गई, जो उस समय उसी बैरक में था। कांस्टेबल को अनुशासनात्मक कार्यवाही में कदाचार का दोषी पाया गया और उसे सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। इस बीच, एक आपराधिक मुकदमे में भी भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के तहत अपराध के लिए उक्त कांस्टेबल पर मुकदमा चलाया गया, जहां उसे दोषमुक्त करार दिया गया।इसके बाद उसने अपनी सेवा से बर्खास्तगी को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की। रिट याचिका खारिज कर दी गई, लेकिन बाद में एक खण्ड पीठ के समक्ष

एक अपील पर, विद्वत एकल न्यायाधीश के आदेश को रद्द कर दिया गया और यह आदेश दिया गया कि चूंकि उस समय तक कांस्टेबल को दांडिक न्यायालय में बरी कर दिया गया था, इसलिए उसे सेवा में बहाल किया जाना चाहिए और चूंकि उस समय तक वह सेवा से सेवानिवृत्त हो चुका था, इसलिए उसे इस निर्देश के साथ सेवा में माना जाएगा कि उसे वापस वेतन और पेंशन दिया जाए। इस न्यायालय ने भारत संघ द्वारा फाइल की गई अपील का विनिश्चय करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि जिन आधारों पर उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया, वे विनिर्दिष्ट थे और केवल इसलिए कि कर्मचारी को दांडिक न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था, इसका यह अर्थ नहीं है कि वह सेवा में बहाल होने का हकदार है, क्योंकि उसे अनुशासनिक कार्यवाही का सामना करने के बाद सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था। इसका कारण यह है कि अनुशासनिक कार्यवाहियां सबूत के एक अलग मानक द्वारा शासित होती हैं, जो किसी दांडिक कार्यवाही में लागू की जाने वाली प्रक्रिया से अलग होती हैं। जबकि दांडिक विचारण में आरोप को संदेह से परे साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर होता है और विभागीय कार्यवाही में, आरोपों को संभावनाओं की प्रचुरता के आधार पर साबित करना होता है।

उपर्युक्त प्रकरण में इस न्यायालय द्वारा 'दांडिक अपराध'और 'कदाचार'के बीच अंतर भी स्पष्ट किया गया है। इनमें से एक को दांडिक न्यायालय में और दूसरे को विभागीय कार्यवाही में साबित करना होता है, और भले ही दोनों एक ही तरह के तथ्यों से उत्पन्न होते हैं, फिर भी दोनों के बीच स्पष्ट अंतर है और क्योंकि किसी व्यक्ति को आपराधिक मुकदमे में बरी कर दिया गया है, इसका अर्थ यह नहीं है कि यह विभागीय कार्यवाही में दिये गए कदाचार के निष्कर्षों को पलट देगा। इस न्यायालय ने यह भी अवलोकन किया कि उच्च न्यायालय ने कैप्टन एम. पॉल एंथोनी प्रकरण में दिए गए इस न्यायालय के निर्णय से 'गलत निष्कर्ष'निकालकर ठीक यही त्रुटि की। इसलिए, हमें

सीताराम मिश्रा (ऊपर) में इस न्यायालय के निर्णय के दो पैराग्राफ यहां पुनः प्रस्तुत करने होंगे: –

"14. तथ्य यह है कि दांडिक विचारण के दौरान पहले प्रत्यर्थी को दोषमुक्त करार दिया गया था, वह अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान दिये गए कदाचार के निष्कर्ष को गलत साबित करने के लिए एक आधार के रूप में स्वतः कार्य नहीं कर सकता है। हमारे विचार में उच्च न्यायालय ने एम. पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड [एम. पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइन्स लिमिटेड, (1999) 3 एससीसी 679:1999 एससीसी (एल एंड एस) 810] वाले प्रकरण में इस न्यायालय के निर्णय से एक गलत निष्कर्ष निकाला है।
उच्च न्यायालय ने उपर्युक्त निर्णय में अधिकथित विधि के निम्नलिखित सिद्धांत का उल्लेख कियाः (एससीसी पृष्ठ 687, पैरा 13)

> "13... विभागीय कार्यवाही में सबूत का मानक संभावनाओं की प्रचूरता में से एक होता है, लेकिन दांडिक मामले में, आरोप को अभियोजन द्वारा संदेह से परे साबित करना पड़ता है। मामूली अपवाद वहाँ हो सकता है जहां विभागीय कार्यवाही और दांडिक प्रकरण एक ही तरह के तथ्यों पर आधारित हो और बिना किसी विसंगति के दोनों कार्यवाहियों में साक्ष्य भी समान हो।"

15. निःसंदेह यह सही है कि दांडिक विचारण में आरोप एक सहकर्मी की मृत्यु से उत्पन्न हुआ, जो उस हथियार से गोली चलने के परिणामस्वरूप हुई थी जिसे बल के सदस्य के रूप में पहले प्रत्यर्थी को सौंपा गया था। लेकिन कदाचार का आरोप पहले प्रत्यर्थी द्वारा अपने हथियार को चलाने में लापरवाही और किस तरीके से हथियार को

संभाला जाना चाहिए, उसके संबंध में विभागीय निर्देशों का पालन करने में उसकी विफलता के आधार पर है। इसलिए, आपराधिक मामले में दोषमुक्ति के आधार पर अनुशासनात्मक जांच के दौरान लगाए गए जुर्माने को रद्द नहीं किया जा सकता। अतः, अनुशासनात्मक प्रकरणों में न्यायिक पुनर्विलोकन के प्रयोग को शासित करने वाले मापदंडों को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ का निर्णय संधारणीय नहीं है।"

इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने **अजीत कुमार नाग बनाम महाप्रबंधक (पीजे), इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड**, में कानून की स्थिति की व्याख्या इस प्रकार की है:–

"11. हमारे मत में, कानून सुस्थापित है। एक दांडिक न्यायालय द्वारा दोषमुक्त करार दिये जाने से नियोक्ता को नियमों और विनियमों के अनुसार शक्ति का प्रयोग करने से वंचित नहीं किया जाएगा। दांडिक और विभागीय दोनों कार्यवाही पूरी तरह से अलग हैं। वे अलग–अलग क्षेत्रों में काम करतीं हैं और उनके अलग–अलग उद्देश्य हैं। जहां दांडिक विचारण का उद्देश्य अपचारी को समुचित दंड देना है, वहीं जांच कार्यवाही का उद्देश्य दोषी से विभागीय तौर पर निपटना और सेवा नियमों के अनुसार दंड लगाना है। दांडिक विचारण में कुछ परिस्थितियों में या कुछ अधिकारियों के समक्ष आरोपी द्वारा दिया गया आपत्तिजनक बयान साक्ष्य के रूप में पूरी तरह से अस्वीकार्य है। साक्ष्य और प्रक्रिया के ऐसे सख्त नियम विभागीय कार्यवाहियों पर लागू नहीं होंगे। दोषसिद्धि का आदेश देने के लिए आवश्यक सबूत का स्तर, अपराध को अभिलिखित करने के लिए आवश्यक सबूत के स्तर से भिन्न है। दोनों कार्यवाहियों में साक्ष्य के मूल्यांकन से संबंधित नियम भी समान नहीं है। दांडिक कानून में, अपने पक्ष को साबित करने का बोझ अभियोजन पर होता है और जब तक अभियोजन पक्ष अभियुक्त के अपराध को 'संदेह से परे'साबित नहीं कर पाता है, तब तक उसे न्यायालय द्वारा

दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। दूसरी ओर, विभागीय जांच में 'संभावनाओं की बहुलता'के आधार पर दर्ज निष्कर्ष के आधार पर अपचारी अधिकारी पर जुर्माना लगाया जा सकता है।"

12.इस प्रकार, वर्तमान प्रकरण में, विद्वान एकल न्यायाधीश के साथ–साथ राजस्थान उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ राजस्थान पुलिस के अनुशासनात्मक प्राधिकरण के आदेश में हस्तक्षेप करने और कैप्टन एम. पॉल एंथनी के प्रकरण पर भरोसा करने में स्पष्ट रूप से गलत थे।अनुशासनात्मक प्राधिकरण ही इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए सक्षम है कि कोई कदाचार किया गया है या नहीं। न्यायाधीश के लिए चिंता का विषय यह होना चाहिए कि क्या नैसर्गिक न्याय और निष्पक्षता के सिद्धांतों का पालन करते हुए यह निर्णय दिया गया है। इस पहलू को इस न्यायालय के हाल के निर्णय (राजस्थान राज्य बनाम हीम सिंह) में रेखांकित किया गया है। संबंधित पैरा इस प्रकार हैः –

> "39. अनुशासनात्मक मामलों में न्यायिक समीक्षा करने में स्पेक्ट्रम के दो छोर होते हैं। पहला छोर संयम के नियम का प्रतीक है। दूसरा छोर यह परिभाषित करता है कि हस्तक्षेप कब स्वीकार्य है।संयम का नियम न्यायिक समीक्षा के दायरे को सीमित करता है। यह एक वैध कारण के लिए है। कदाचार किया गया है या नहीं, इसका निर्धारण मुख्य रूप से अनुशासनिक प्राधिकारी के अधिकार क्षेत्र में आता है। न्यायाधीश अनुशासनिक प्राधिकारी के रूप में कार्य नहीं करता है। न ही न्यायाधीश एक नियोक्ता के रूप में कार्य करता है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दिये गए तथ्यों के निष्कर्ष को आदर दिया जाना इस विचार को मान्यता देना है कि यह

नियोक्ता है जो उनकी सेवा के कुशल संचालन के लिए जिम्मेदार है। अनुशासनात्मक जांच में नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन किया जाना चाहिए। किंतु वे साक्ष्य के उन कड़े नियमों द्वारा शासित नहीं होते हैं जो न्यायिक कार्यवाहियों पर लागू होते हैं। अतः सबूत का मानक कठोर मानक नहीं है जो सबूत के आपराधिक विचारण को संदेह से परे शासित करता है, बल्कि एक सिविल मानक है जो संभाव्यताओं की प्रबलता द्वारा शासित होता है। प्रधानता के नियम के भीतर, संदर्भ और विषय के आधार पर अलग–अलग दृष्टिकोण हैं। स्पेक्ट्रम का पहला छोर सम्मान और स्वायत्तता पर आधारित है–एक तथ्यान्वेषण प्राधिकारी के रूप में अनुशासनात्मक प्राधिकारी की स्थिति का सम्मान और सेवा में अनुशासन और दक्षता को बनाए रखने में नियोक्ता की स्वायत्तता का सम्मान। स्पेक्ट्रम के दूसरे छोर पर यह सिद्धांत है कि जब जांच के निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित न हों या जब वे विकृति से ग्रस्त हों तो न्यायालय इसमें हस्तक्षेप कर सकता है। महत्वपूर्ण साक्ष्य पर विचार करने में विफलता एक ऐसी स्थिति है जिसे कानून द्वारा तथ्य का विकृत निर्धारण माना जाएगा। आनुपातिकता हमारे न्यायशास्त्र की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। सेवा न्यायशास्त्र ने लंबे समय से इस बात को मान्यता प्रदान की है कि न्यायालय के प्राधिकार को इसमें तब हस्तक्षेप करने की अनुमति है जब निष्कर्ष या जुर्माना,साक्ष्य या कदाचार की तुलना में असंगतहो।न्यायिक शिल्प इन दोनों तटों के बीच एक

स्थिर पाल बनाए रखने में निहित है जिसे स्पेक्ट्रम के दो छोर कहा जाता है। न्यायाधीश न्यायिक समीक्षा करते समय केवल मंत्रोच्चार की भांति मौखिक समीक्षाएं नहीं करते हैं। एक प्रारंभिक या शुरुआती स्तर की जांच यह निर्धारित करने के लिए की जाती है कि क्या अनुशासनात्मक जांच के निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित है। यह न्यायालय की अंतरात्मा को संतुष्ट करने के लिए है कि कदाचार के आरोप का समर्थन करने और विकृति से बचने के लिए कोईसाक्ष्य हैं। लेकिन यह न्यायालय को अनुशासनात्मक जांच में साक्ष्य संबंधी निष्कर्षों का पुनर्मूल्यांकन करने या ऐसे दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित करने की अनुमति नहीं देता है जो न्यायाधीश को अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। ऐसा करने से प्रथम सिद्धांत को ठेस पहुंचेगी जिसकी रूपरेखा ऊपर दी गई है। सामान्य बुद्धि का प्रयोग ही अंतिम मार्गदर्शक सिद्ध होता है। जिसके बिना न्यायाधीशों द्वारा निर्णय देने का शिल्प व्यर्थ है।"

यह सच है कि कैप्टन एम. पॉल एंथनी के प्रकरण के अलावा इस न्यायालय ने कुछ प्रकरणों में ऐसे कर्मचारी की बहाली में हस्तक्षेप नहीं किया जिसे अनुशासनात्मक कार्यवाही के परिणामस्वरूप बर्खास्त कर दिया गया था और केवल आपराधिक कार्यवाही में उसे दोष मुक्त करार देने के कारण उसे सेवा में बहाल कर दिया गया था, लेकिन ऐसे मामलों में न्यायालय के लिए वजहें यह थीं कि लगभग ऐसे सभी मामलों में, दोषमुक्ति ससम्मान दोषमुक्ति थी, सांकेतिक दोषमुक्ति या संदेह के लाभ के कारण दी गई दोषमुक्ति नहीं थी।

13.हस्तगत प्रकरण में, प्रत्यर्थी को विचारण न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया था और अपील में अपीलीय न्यायालय ने उसे 'संदेह का लाभ'देते हुए दोषमुक्त करार दिया था। अपीलीय प्राधिकारी के दिनांक 26.11.1994 के आदेश का प्रभावी भाग इस प्रकार हैः –

"इसलिए, उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर, अपीलार्थी अभियुक्त की ओर से प्रत्यर्थी/अभियोजन पक्ष के खिलाफ वर्तमान अपील को अनुमति दी जाती है और मुंसिफ और न्यायिक मजिस्ट्रेट धौलपुर के अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दिनांक 21.3.94 को पारित निर्णय और सजा को इसके द्वारा खारिज कर दिया जाता है और उपरोक्त अपीलकर्ता/अभियुक्त फूल सिंह को संदेह का लाभ देते हुए भा.दं.सं. की धारा 392 और शस्त्र अधिनियम की धारा 3/25 के तहत आरोप से दोषमुक्त किया जाता है।"

14. इसलिए, वर्तमान प्रकरण में प्रत्यर्थी की दोषमुक्ति एक सम्मानजनक दोषमुक्ति नहीं है, बल्कि संदेह के लाभ के कारण दी गई दोषमुक्ति है। इन परिस्थितियों के तहत और कानून की स्थिति को देखते हुए, जैसा कि ऊपर कहा गया है, यह अपील स्वीकार की जाती है और राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ के विद्वत एकल न्यायाधीश के दिनांक 29.01.2014 के आदेश और खण्ड पीठ के दिनांक 09.09.2020 के आदेश को एतदद्वारा रद्द किया जाता है।

न्यायाधीश [एस. रविन्द्र भट्ट]

न्यायाधीश [सुधांशु धूलिया]

नई दिल्ली

02 सितंबर, 2022

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**'के जरिए अनुवादक की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।